Leadership, Education, Personality: An Interdisciplinary Journal ISSN: 2524-6178
www.sibe.rpress.co.in, Vol. 19, Issue 01 January 2024, UGC CARE 1

भारतीय संघवाद का बदलता स्वरूप

मोनिका चोपड़ा
शोधार्थी - राजनीति शास्त्र
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ(यू.पी.)

प्रोफेसर सुनीता तिवारी
प्रिंसिपल महिला महाविद्यालय बस्ती
(यू.पी.)

सांराशः-

भारतीय संविधान का संघीय चरित्र इसकी प्रमुख विशेषताओं में से एक है। भारत में केन्द्रीय और राज्य सरकारों की उपस्थिति और कार्यों का स्पष्ट विभाजन संघात्मक ढांचे का आधार है। हांलाकि भारतीय संविधान में कही भी संघवाद शब्द का प्रयोग नहीं किया गया हैं, बल्कि इसके स्थान पर भारत को 'राज्यों के संघ' के रूप में संबोधित किया गया है। जिसका तात्पर्य है कि भारतीय राज्यों को संघ से पृथक होने की शक्ति नहीं है। स्वतंन्त्रता प्राप्ति के बाद के प्रारंभिक दशकों में जब हम संघीय संरचना की बात करते है तो उसमें केन्द्र शीर्ष पर होता था और राज्य अधीनस्थ, पूर्ववर्ती योजना आयोग की कार्यपद्धति भी ऐसी ही थी। योजना आयोग ने विकास की राह दिखाने के लिए वित्तीय साधनों को प्राथमिक माना तथा पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विकास गतिविधियों को क्रियान्वित किया। इस मॉडल में राज्यों की निर्णयन में भागीदारी न के बराबर थी। केन्द सरकार देश में विकास गतिविधियों का निर्णय स्वयं करती थी। इसका समग्र परिणाम यह हुआ कि भारत का संघीय चरित्र केन्द्र की और अत्यधिक झुका रहा। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद राज्यों की स्वायत्तता की मांग उठने लगी। इस दिशा में कुछ परिवर्तन और विकास प्रक्रिया, निर्णयन में राज्यों को भागीदार बनाने तथा सहयोगात्मक संघवाद की और तो बढ़ा किन्तु संरचनात्मक ढ़ांचे में परिवर्तन न होने से इस और विकास कम हुआ। हालांकि बढ़ती जन जागृति के कारण राजनीतिक हस्तक्षपों में कमी आई, साथ ही गठबंधन सरकारों के दौर में राज्यों का महत्व बढ़ गया। 2015 में नीति आयोग के निर्माण के बाद भारतीय संघवाद मे आमूलचूल परिवर्तन देखा जा रहा है। नीति आयोग अपने पूर्ववर्ती योजना आयोग से भिन्न मॉडल पर कार्य कर रहा है। यह वित्त प्रदाता के स्थान पर एक थिंक टैंक के रूप में कार्य करता है और निर्णयन प्रक्रिया में राज्यों को भी शामिल किया जा रहा है। केन्द्र सरकार न केवल सहयोगी भूमिका में है बल्कि अवसरंचना विकास कैसे कार्यो द्वारा राज्यों के विकास को गति दे रही है। संघवाद में एक नई प्रवृति के रूप में रूप में प्रतिस्पर्द्धात्मकता को बढ़ावा दिया जा रहा है। अब लोग भी अपनी सरकारों के कार्यों का मूल्यांकन कर रहे है। जिससे सरकारों पर कार्य करने का दबाव बढ़ गया है। वर्तमान में भारतीय संविधान विकासशील संघवाद की और प्रवृत्त होता जा रहा है।

मूल शब्दः- केन्द्र - राज्य सम्बन्ध, विकेन्द्रीकरण, नीति आयोग, सहयोगी संघवाद

संघवाद सरकार की एक प्रणाली है जिसमें शक्तियों को सरकार के दो या दो से अधिक स्तरों जैसे केन्द्र और राज्यों के बीच विभाजित किया गया है। संघवाद एक बड़ी राजनीतिक इकाई के भीतर विविधता और क्षेत्रीय स्वायत्तता स्वतन्त्रता के समायोजन की अनुमति देता है। भारतीय संविधान कुछ एकात्मक विशेषताओं के साथ एक संघीय प्रणाली स्थापित करता है। इसे कभी-कभी अर्ध-संघीय प्रणाली भी कहा जाता है क्योंकि इसमें फेडरेशन और यूनियन दोनों के तत्व शामिल होते हैं। संविधान केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच विधायी प्रशासनिक और कार्यकारी शक्तियों को वितरण को निर्दिष्ट करता है। विधायी शक्तियों को संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है जो संघ सरकार एवं राज्य सरकारों को प्रदत्त शक्तियों और उन के बीच साझा की गई शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती है। भारतीय संघवाद अपने संदर्भ में अद्वितीय है क्योंकि यह ब्रिटिश शासन के तहत प्रचलित एकात्मक प्रणाली से स्वतंत्रता के बाद एक संघीय प्रणाली के रूप में विकसित हुआ है। भारत की राजनीतिक परिस्थितियों के साथ संघवाद के स्वरूप में भी परिवर्तन आता रहा है। भारतीय संघवाद को समय के साथ कई चुनौतियों और समस्याओं का सामना करना पड़ा है। जैसे कि रियासतों का एकीकरण, राज्यों का भाषाई पुर्नगठन, क्षेत्रीय आन्दोलन एवं स्वतन्त्रता की मांग, केन्द्र राज्य संबंध एवं संघर्ष, राजकोषीय संघवाद एवं संसाधन साझाकरण आदि।[1] भारत की संघ व्यवस्था को राजनीतिक तत्वों के बदलते परिप्रेक्ष्य में चार प्रकार से चित्रित किया जा सकता है:-

1. केन्द्रीकृत संघवाद का युग (1950-1967):-

सन् 1950 से 1967 तक 'केन्द्रीकृत संघवाद का युग' कहा जा सकता है। सन् 1950 से 1964 तक का भारतीय राजनीति युग नेहरू युग कहलाता है। इस युग में केन्द्र तथा राज्यों के सम्बन्ध मधुर बने रहे और उनमें मतभेद उभरकर सामने नहीं आए। इस कारण व्यवहार में कुछ ऐसे राजनीतिक तथ्य उभरे जिन्होंने भारत में केन्द्रीकरण की प्रवृति को पनपने में मदद की। केन्द्र में पण्डित नेहरू, सरदार पटेल जैसे नेता मौजूद थे। केन्द्र तथा राज्यों में कांग्रेस का एकछत्र शासन था। अतः मतभेदों को दल के संगठन स्तर पर ही हल कर लिया जाता था। पं0 नेहरू के व्यक्तित्व तथा नेतृत्व शक्ति का कोई राज्य विरोध करने तथा कोई नेता मतभेद उत्पन्न करने का साहस नहीं करता था। योजना अयोग तथा राष्ट्रीय विकास परिषद 'सुपर कैबिनेट' के रूप में कार्य कर रही थी और एक दल की प्रधानता के कारण इसके कार्यों को चुनौती नहीं दी जा सकती थी। इस काल में केन्द्रीकरण की सशक्त प्रवृतियों के परिणामस्वरूप भारतीय संघवाद राजनीतिक समन्वय और आर्थिक विकास के दोहरे उदेश्ययों की पूर्ति का साधन बना।

2. सहयोगी संघवाद का युग (1967-1971):- चतुर्थ आम चुनाव के बाद शक्ति का सन्तुलन राज्यों की और झुका। कांग्रेस का एकछत्र शासन समाप्त हुआ, केन्द्र में नेहरू जैसा व्यक्तित्व नहीं रहा और राष्ट्रीय विकास परिषद में अनेक दलों के मुख्यमंत्री अपनी केन्द्र विरोधी आवाज बुलन्द करने लगे। राज्यों में नेहरू के बाद मुख्यमंत्री शक्ति के केन्द्र बन गए और वे केन्द्र को प्रभावित करने लगे। कांग्रेस दल के विभाजन के बाद लोकसभा में शासक दल अल्पमत में आ गया जिससे केन्द्रीय नेतृत्व को राज्यों की मांग के आगे झुकना पड़ा।

1967 के चुनाव के बाद 8 राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकार बनी और राज्यों ने अपने राज्य क्षेत्र में केन्द्रीय हस्तक्षेप का विरोध करना आंरभ कर दिया। ये सरकारें संघ सरकार के नियन्त्रण में उस सीमा तक नहीं रहना चाहती थीं जिस सीमा तक कांग्रेस दल की प्रादेशिक सरकारें पहले रहती थी। प्रत्येक राज्य चाहता था कि केन्द्र द्वारा प्रस्तावित औद्यौगिक संस्थानों को उसी के क्षेत्र में स्थापित किया जाए। भाषा के प्रश्न को लेकर संघर्ष उत्पन्न हुए। केन्द्रीय रिजर्व पुलिस को लेकर मतभेद पैदा हुए और राज्यपालों की नियुक्ति का प्रश्न भी विवाद का कारण बन गया।

केन्द्र और राज्यों के बीच विवादों के बाद भी आपसी सहयोग बना रहा और 'सहयोगी संघवाद' के युग का सूत्रपात हुआ। सहयोगी संघवाद का प्रमुख लक्षण केन्द्र और राज्यों की एक दूसरे पर निर्भरता है। इस व्यवस्था में केन्द्रीय सरकार शक्तिशाली तो होती है, किन्तु राज्य सरकारें भी अपने क्षेत्र में कमजोर नहीं होती। चौथे आम चुनाव के बाद प्रधानमंत्री श्रीमति इन्दिरा गांधी को मद्रास के अन्नादुराई, ओडिशा के आर. एन. सिंहदेव, उत्तर प्रदेश के चरण सिंह तथा पंजाब के गुरनाम सिंह जैसे गैर-कांग्रेसी मुख्यमन्त्रियों का विश्वास प्राप्त करने में सफलता मिली।

3. एकात्मक संघवाद का युग (1971- 1977, 1980-1989)

सन् 1971 के पंचम लोकसभा के निर्वाचन तथा 1972 के राज्य विधानसभाओं के निर्वाचनों और जनवरी 1980 के लोकसभा एवं बाद में विधानसभा चुनावों से दो तथ्य उभरे - प्रथम भारतीय राजनीति में श्रीमति इन्दिरा गांधी और संजय गांधी ही सर्वमान्य नेता है तथा द्वितीय, कांग्रेस दल ही जनता का नेतृत्व कर सकता है। इससे शक्ति का सन्तुलन केन्द्र की और झुक गया। जून 1975 से मार्च 1977 तक तो भारतीय राज्य एकात्मक राज्य में परिवर्तित कर दिया गया था सम्पूण शक्तियों केन्द्रीय सरकार के हाथों में आ गई। राज्यों के मुख्यमंत्रियों की स्थिति केन्द्रीय सरकार के सूबेदार जैसी हो गइ। आपातकाल के दौरान मुख्यमंत्रियों का एक पैर अपने राज्य में रहता था तथा दूसरा दिल्ली में। जनवरी 1976 में तमिलनाडू में और मार्च 1976 में गुजरात में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया। तमिलनाडू में द्रविड़ मुनेत्र कड़गम और गुजरात में जनता मोर्चे का शासन था। जनवरी 1980 के लोकसभा चुनावों के बाद केन्द्रीय सरकार ने नौ राज्यों की गैर-कांग्रेसी विधान सभाओं को भंग कर दिया। ऐसा लगने लगा कि देश पुनः एक दल प्रधान व्यवस्था की और उन्मुख हो रहा है।

4. सौदेबाजी वाली संघ व्यवस्थाः- (1977-1980, 1989-2009)

छठे आम चुनावों के परिणामों से भारतीय राजनीति में आमूलचूल परिवर्तन आया। केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार स्थापित हुई और राज्यों में विविध दलों की सरकारों की स्थापना हुई। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, दिल्ली, राजस्थान, हरियाणा व हिमाचल प्रदेश में जनता पार्टी सत्ता में आई। पंजाब में जनता व अकाली दल, पश्चिमी बंगाल में मार्क्सवादी दल, तमिलनाडू व पण्डिचेरी में अत्राद्रमुक, कश्मीर में नेशनल कांग्रेस, केरल में साम्यवादी दल के नेतृत्व वाला मोर्चा, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश में कांग्रेसी सरकारे पदासीन थी। केन्द्र की जनता सरकार एक दुर्बल सरकार थी। क्योंकि यह विभिन्न घटकों से बनी एक गठबंधन सरकार के समतुल्य थी। अतः राज्यों की सरकारों ने सौदेबाजी करने का अनवरत यत्न किया। यहां तक कि कतिपय गैर-जनता

राज्य सरकरों ने 'राज्य स्वतंत्रता' का नारा बुलन्द किया। वित्तीय स्त्रोतों के वितरण को लेकर पश्चिम बंगाल की मार्क्सवादी सरकार ने सदैव केन्द्रीय सरकार से दबाव एवं सौदेबाजी की भाषा में बातचीत करने का प्रयत्न किया।

1989-2009 के निर्वाचनों से पता चलता है कि भारत में संघ व्यवस्था का 'सौदेबाजी' वाला प्रतिमान है। विश्वनाथ प्रताप सिंह (1989), चन्द्रशेखर (1990), पी0वी0 नरसिंहराव (1991), एच.डी. देवगौड़ा (1996), इन्द्र कुमार गुजराल (1997), अटल बिहारी वाजपेयी (1998 - 1999) तथा डॉ मनमोहन सिंह (2004 एवं 2009) के नेतृत्व में बनने वाली सभी केन्द्रीय सरकारें अल्पमलीय सरकारें थी जिनहें सत्ता में बने रहने के लिए उन दलों का सहारा लेना पड़ा जो राज्यों में शक्ति के पुंज थे। अनेक राज्यों में क्षेत्रीय दलों की सरकारें सत्तारूढ़ रही जिनके कन्धों पर केन्द्रीय सरकारें टिकी हुई थी और अनेक मसलों पर वे केन्द्र से सौदेबाजी करने से नहीं हिचकिचाती थी।

फरवरी 1998 के लोकसभा चुनावों में किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हुआ और भाजपा नेता अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा केन्द्र में सरकार बनाने के दावे को उस समय बड़ा धक्का लगा जब अत्राद्मुक नेता जय ललिता ने अपने समर्थन की कीमत वसूलने के लिए कतिपय शर्तें रखी जैसे-कावेरी ट्रिब्यूनल के निर्णय पर अमल, सभी नदियों का राष्ट्रीयकरण, 69 प्रतिशत आरक्षण को संवैधानिक आरक्षण, राज्यों को आरक्षण का कोटा अपनी जरूरत के हिसाब से तय करने का अधिकार, महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण और आठवीं अनुसूची की सभी भाषाओं को राजभाषा का दर्जा देना।

मई 2004 के चुनावों के बाद केन्द्र में कुर्सी बचाने की कीमत कांग्रेस को राज्यों में सत्ता की चाबी सहयोगियों को देकर चुकानी पड़ी। केन्द्र में कांग्रेस को समर्थन देने के बदले सहयोगी दल कड़ी सौदेबाजी करने लगे। बिहार में उसे राजद की कृपा पर निर्भर रहना पड़ा, महाराष्ट्र में उसे रांकांपा, कर्नाटक में जद (यू), आन्ध्र प्रदेश में तेलगांना राष्ट्र समिति और राष्ट्रपति-उपराष्ट्रपति चुनाव में बसपा के सहयोग के बदले उत्तर प्रदेश में मायावती को रियायतें देनी पड़ी। अप्रैल-मई 2009 के 15 वीं लोकसभा के चुनावों में भी यही स्थिति रही। कांग्रेस का प्रमुख सहयोगी दल द्रमुक, टी.आर.बालू और ए. राजा को कैबिनेट में शामिल करने पर अड़ गया जब मांग पूरी नहीं हुई तो सरकार में शामिल होने के बजाय बाहर से समर्थन की घोषणा कर दी। सरकार के हर महत्पवूर्ण निर्णयों स्प्रेक्टम आंवटन, विमानों की खरीद, कोयला ब्लॉको के आवंटन आदि में तमाम तरह की सौदेबाजी हुई।[2]

वर्तमान में अधिक स्वायत्तता की मांग, केन्द्रीय हस्तक्षेप का विरोध इत्यादि भारतीय संघवाद की विशेषता बन गई है जिसे विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है।

1. पश्चिमी बंगाल, तमिलनाडू, पंजाब जैसे कुछ राज्यों द्वारा अधिक स्वंतन्त्रता की मांग की जा रही है।
2. कुछ राज्यों द्वारा अधिक वित्तीय सहायता, विशेष राज्य के दर्जे की मांग करना। बिहार लम्बे समय से विशेष राज्य के दर्जे की मांग कर रहा है।
3. पूर्वोत्तर भारत, कश्मीर में विखंडनकारी, अलगाववादी तत्व की नकारात्मक प्रवृत्तियों में उभार।

वर्तमान संदर्भ में संघवाद की चुनौतियाँ

हाल ही के वर्षों की कुछ घटनाओं को देखा जाए तो प्रतीत होता है कि सहयोगी संघवाद की भूमिका भारत में कम हो गयी है तथा राज्यों में केन्द्र का हस्तक्षेप बढ़ा है। संसाधनों के आंवटन तथा कल्याणकारी योजनाओं में केन्द्र की भूमिका बढ़ती का रही है। राज्यों को खर्च ज्यादा करना होता है परन्तु उनकी आय के स्त्रोत कम है। हालांकि GST, पैट्रोलियम पदार्थ, अल्कोहल, संपति कर राज्यें के राजस्व के प्रमुख स्त्रोत है लेकिन इनसे राज्यों को अधिक आय प्राप्त नहीं हो रही है।[3]

कोविड-19 महामारी के प्रारंभिक चरणों ने भारतीय संघीय ढांचे में एकात्मक झुकाव को उजागर किया। केन्द सरकार ने केन्द्रीय आपदा प्रबंधन कानून के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए एक राष्ट्रीय लॉकडाऊन लागू किया और इसके गृह मंत्रालय ने महामारी को नियंत्रित करने के लिए राज्यों को व्यापक दिशानिर्देश जारी किए। यह कानून आवश्यकता पड़नें पर केन्द्र सरकार को राज्य और स्थानीय अधिकारियों को आदेश देने का अधिकार देता है। ऐसा करके राज्यों ने केन्द्र सरकार को निर्णय लेने की काफी शक्ति और राजनीतिक पूंजी सौंप दी। लॉकडाऊन के बाद के चरणों में उनकी स्वायत्तता बहाल हुई है।[4] केन्द्र सरकार ने नियमों में ढ़ील दी। राज्यों को स्वास्थ्य सुविधाएं दुरूस्त करने में सहयोग दिया, स्थानीय आधार पर लॉकडाऊन की व्यवस्था की तथा महामारी के प्रभावों को कम करने के लिए सामाजिक सुरक्षा लागू की। केन्द्र व राज्य सरकारों के मिले-जुले प्रयासों से भारत मजबूती से कोविड-19 जैसी महामारी से लड़ने में सफल रहा।[5] लेकिन भारतीय राज्यों के पास अब भी केन्द्र की तुलना में कम कार्यात्मक शक्ति है। चूंकि लॉकडाऊन के कारण लगभग सभी आर्थिक गतिविधियों को बंद करना पड़ा। इसलिए राज्य सरकारों के राजस्व में भारी कमी आई। राज्यों की मांग है कि केन्द्र योजनाओं के बजाए आर्थिक मदद उपलब्ध कराए ताकि राज्य अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कार्य कर सके।[6]

संघवाद को सुदृढ़ करने की आवश्यकता क्यों हैं?

1. **विविधता और बहुलता का संरक्षणः-** भारत के समाज, संस्कृति, भाषा, धर्म आदि की विविधता एवं बहुलता की रक्षा और संरक्षण के लिए संघवाद आवश्यक है।
2. **स्वतंत्रता और अधिकारों की सुरक्षाः-** बढ़ते केन्द्रीकरण की स्थिति में राज्यों और अन्य उप-राष्ट्रीय इकाइयों की स्वायत्तता के लिए संघवाद आवश्यक है।
3. **शासन की गुणवत्ता और दक्षता में सुधारः-** राज्यों और अन्य उप-राष्ट्रीय इकाइयों को उनकी क्षमताओं के अनुसार अपनी नीतियां एवं कार्यक्रम बनाने में सक्षम बनाकर विभिन्न स्तरों पर शासन में दक्षता ला सकते हैं।
4. **संतुलित और समावेशी विकास को बढ़ावा देनाः-** सरकार के विभिन्न स्तरों के बीच अवसरों का समान एवं पारदर्शी वितरण सुनिश्चित करके भारत के सभी क्षेत्रों का संतुलित और समावेशी विकास हो सकता है।
5. **संवाद और सहयोग को बढ़ावा देनाः-** सरकार के विभिन्न स्तरों के बीच संवाद और सहयोग की बढ़ावा देने तथा इसे बनाए रखने के लिए संघवाद आवश्यक है।

वर्तमान में निम्न संस्थाएँ संघवाद को बढ़ावा दे रही है:-

1. सर्वोच्च न्यायालयः-

यह देश की सर्वोच्च न्यायिक संस्था है और संविधान के संरक्षक एवं व्याख्याकार के रूप में कार्य करती है। इसके पास केंन्द्र और राज्यों के बीच या राज्यों के आपसी विवादों पर निर्णय लेने की शक्ति है।

2. अंतर्राज्यीय परिषदः-

संविधान के अनुच्छेद 263 के तहत स्थापित अंतर्राज्यीय परिषद् केन्द्र और राज्यों के बीच समन्वय एवं सहयोग को बढ़ावा देने के लिए एक संवैधानिक निकाय है।

3. वित्त आयोगः-

यह केन्द्र और राज्यों के बीच राजस्व के वितरण की अनुशंसा करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 280 के तहत स्थापित एक संवैधानिक निकाय है। यह राज्यों के संसाधनों को बढ़ाने और जरूरतमंद राज्यों को सहायता व अनुदान देने के उपाय भी सुझाता है।

4. नीति आयोगः-

इसकी स्थापना वर्ष 2015 में योजना आयोग के स्थान पर की गई थी। यह आर्थिक और सामाजिक विकास के मामलों पर केन्द्र ओर राज्यों के लिए एक थिंक टैंक एवं सलाहाकार निकाय के रूप में कार्य करता है। यह नीति निर्माण और कार्यन्वियन में राज्यों को शमिल करके सहकारी संघवाद को भी बढ़ावा देता है। इसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, एक कार्यकारी अधिकारी, सभी राज्यों के मुख्यमंत्री एवं केन्द्रशासित प्रदेशों के उपराज्यपाल होते हैं।[7]

निषकर्षः-

अन्त में हम कह सकते है भारतीय संघवाद में समय के अनुसार अनेक परिवर्तन हुए है। 90 का दशक प्रारम्भ होने से पहले भारतीय संघवाद में जबरदस्त केन्द्रीकरण की प्रवृति देखी गई। ये बात सही है कि भारतीय संविधान आपातकाल में संघ को अत्यधिक शक्तिशाली बना देता है किन्तु सामान्य स्थिति में ऐसा होने की कोई बात नहीं कहता है। आरम्भिक वर्षों में केन्द्र सरकार ने ऐसे कई तरीकों का प्रयोग किया जिससे राज्यों के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण हुआ। नियोजन के माध्यम से भी केन्द्र ने राज्यों के ऊपर अपना प्रभाव बढ़ाया। इसके अतिरिक्त राज्यापाल की भूमिका, केन्द्र व राज्यों के बीच संसाधनों का वित्तीय आंवटन, अनुच्छेद 356 का दुरूप्रयोग आदि ने केन्द्र-राज्य संबंधों को प्रभावित किया। कुल मिलाकर केन्द्र ने काफी शक्ति संकेन्द्रन कर लिया था। परन्तु 90 के दशक में केन्द्र स्तर पर क्षेत्रीय दलों की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई। इसने संघ-राज्य संबंधों के स्वरूप को काफी परिवर्तित कर दिया। राज्यों के मामलों में केन्द्रीय हस्तक्षेप हट गया। अनुच्छेद 356 का उपयोग सीमित होने लगा।[8] 1991 में जब उदारीकरण की नीति को अपनाया गया तब बहुत सारे बदलावों की शुरूआत हो गई। 1991 के बाद से 'इन्डीकेटेड प्लानिंग' की शुरूआत हो गई। इससे पहले 'कमांड प्लानिंग' थी।

फलतः सरकारी नियन्त्रण में पर्याप्त ढील दी गई विशेष रूप से उद्योग क्षेत्र में। औद्योगिक लाइसेन्सिंग प्रणाली खत्म कर दी गइ।

उपरोक्त परिवर्तनों से अर्थिक विकास व विदेशी निवेश आदि क्षेत्रों में राज्यों की भूमिका का विस्तार हुआ जबकि पहले इन क्षेत्रों में केन्द्र का दबदबा था। साथ ही राज्यों को अन्तर्राष्ट्रीय विकास संस्थाओं विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक से सीधे तौर पर ऋण लेने की अनुमति दी गई। इससे राज्यों की वित्तीय स्वतंत्रता में वृद्धि हुई।

वर्ष 2014 के आप चुनावों में गठबन्धन राजनीति को एक बड़ा झटका लगा और भाजपा द्वारा पूर्ण बहुमत से केन्द्र में सरकार बनाई गई। वर्ष 2019 में अपनी जीत को दोहराकर भाजपा पार्टी भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में एक प्रभावी स्थान बनाने में सफल रही है। 2014 के चुनावी अभियान में ही प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 'सहयोग आधारित संघवाद' को राज्यों के सशक्तीकरण के लिए आवश्यक बताया था।[9]

जब वे प्रधानमंत्री बने तो इस दिशा में इन्होनें सकारात्मक प्रयास भी किए। योजना आयोग के स्थान पर नीति आयोग बनाया गया। वस्तु एवं सेवा कर लागू किया गया जिसके माध्यम से अप्रत्यक्ष करों के बँटवारे में केन्द्र व राज्य की समान भागीदारी हो सके। केन्द्र सरकार ने 14वें वित्त आयोग द्वारा दिए गए इस सिफारिश को स्वीकार किया कि केन्द्रीय पूल में से राज्यों को 32 प्रतिशत के स्थापर 42 प्रतिशत हिस्सा दिया जाए।[10] स्पष्ट रूप से मोदी जी के इन प्रयासों से भारत का संघीय ढ़ांचा मजबूत हुआ है। अन्ततः भारत जैसे विविधतापूर्ण देश के लिए संघवाद के छः स्तम्भों के बीच उचित सन्तुलन आवश्यक है। ये छः स्तम्भ है - राज्यों की स्वतंत्रता, राष्ट्रीय एकीकरण, केन्द्रीयकरण, विकेन्द्रीकरण, अत्याधिक राजनीतिक केन्द्रीकरण अथवा अराजकतापूर्ण राजनीतिक विकेन्द्रीकरण दोनों ही भारतीय संघवाद को क्षीण बना सकते हैं। एक सही संतुलन ही केन्द्र सरकार के अतिक्रमणकारी कदमों से राज्यों की अलग होने की भावना के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। ताकि राष्ट्रीय एकता बनी रहें।[11]

संदर्भ सूचीः-

1) इंडियन एक्सप्रेस, "India's Federalism" 26-06-2023 (https://www.drishtiias.com/hindi.news.editorials/complexity-of-Indian-federalism.
2) डॉ बाबू लाल फड़िया, ''भारतीय शासन एवं राजनीति'' साहित्य भवन, आगरा (2000) पृ. 161-163
3) https://www.gkbucket.com/2022/10/ BPSC.mains-answer-writing-federalism.
4) https://carnegieindia.org
5) https://www.sieallahabad.org (भारतीय संघवाद का बदलता स्वरूप - पिछले 75 वर्षों का एक विवेचन कैसे Covid-19 भारतीय संघवाद को बदल रहा है - कार्नेगी इंडिया।
6) https://carneigindia.org.
7) https://www.drishtiias.com (भारतीय संघवाद की जटिलता)
8) Singh, M.P. & Saxena, Rakha (2013), Federalising India in the age of globalization, Primas Book, New Delhi P-49-50.
9) K.K. Kailash, "The Chimera of cooperative federalism", in the union and the states; A symposium on the changing federal dynamics in India, ed. Yemini Siyer & Lowis Tillin, seminar, May 2019 accessed from (https://www.India-seminar.com / 2019/717/717-kk-Kailash,htm.
10) Ambar Kumar Ghosh, "The Paradox of 'centralized Federalism; An Analysis of The Challenges to India's federal Design." ORF OCCASIONAL PAPER, 272, September 2020, accesed from https://www.orfonline.org/research/the-paradox-of-contralised-federalism.
11) Jamesmanor, "India's states: The struggle to govern." studies in Indian politics, Vol. 4 (1) 2016, P. 8-21.